ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 PP. NO.- 64-67

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-14, No.-IV, Issues-22, YEAR- Oct.-Dec.-2021

धर्म सम्बन्धी गाँधी जी के विचार एवं आधुनिक परिवेश में उनकी प्रासंगिकता

1. डॉ0 आशा शर्मा
2. सत्येन्द्र कुमार तिवारी

1. एसो0 प्रोफेसर, 2.शोध अध्येता– शिक्षाशास्त्र विभाग, म0 गॉ0 चित्रकूट–सतना (म0प्र0), भारत

Received- 13 .10. 2021, Revised- 18 .10. 2021, Accepted - 23.10.2021 E-mail: satyendra07081973@gmail.com

सारांशः *महात्मा गाँधी, धर्म का सच्चा सार नैतिकता में निहित मानते थे। वे मानते थे कि सच्ची नैतिकता और सच्चा धर्म एक दूसरे के सिाथ अविच्छेद्य रूप में बँधे हुए हैं। नैतिकता के लिए धर्म का वही स्थान है, जो जमीन में बीज उगने के लिए जल का होता है। वे जब भी जीवन में संकट का अनुभव करते थे, अपने–आपको ईश्वर के प्रति समर्पित कर देते थे। वे विजय के उन्माद और पराजय की निराशा से सदैव स्वयं को मुक्त कर अपने आत्म–विश्वास के बल पर आगे बढ़ते रहे और कर्म के फल को परमात्मा का प्रसाद मानते रहे।*[1]

गाँधी जी की धर्म भावना विभिन्न धर्मो के महान् सन्तों एवं उपदेशों से अनुप्राणित थी। 'भगवत् गीता' तो सदैव उनका मार्गदर्शन करती थी। उनकी धर्म–निष्ठा ने ही उन्हें महान् कर्मयोगी बना दिया। गाँधी जी का विचार था कि, 'त्याग, संसार से पलायन नहीं और न मोक्ष, मृत्यु के बाद की स्थिति है।' सच्चा त्याग तो अनासक्त कर्मयोग है एवं सच्चा मोक्ष वस्तुतः अपने क्षुद्र स्वार्थ और कलुशित मनोवेगों के बन्धनों से ही मनुष्य की मुक्ति है।

कुंजीभूत शब्द– नैतिकता, अविच्छेद्य रूप, उन्माद, पराजय, आत्म–विश्वास, अनुप्राणित, मार्गदर्शन, पलायन, क्षुद्र ।

गाँधी जी 'गीता' को अपनी 'माता' कहा है। उनके शब्दों में– आज गीता मेरी बाइबिल या कुरान ही नहीं बल्कि उससे भी ज्यादा है– वह मेरी माँ हैं। मुझे जन्म देने वाली अपनी लौकिक माँ को मैं बहुत पहले ही खो चुका हूँ। लेकिन इस शाश्वत माता ने तभी से मेरे निकट रहकर मेरी माँ के अभाव को पूरी तरह दूर किया है। यह कभी नहीं बदली है, उसने मुझे कभी निराश नहीं किया है। जब मैं कठिनाई या कष्ट में होता हूँ तो इसी की छाती से जा लगता हूँ। उनके विचार से, मनुष्य धर्म के बिना जी नहीं सकता। गाँधी जी की मान्यता थी कि प्रत्येक धर्म में कुछ अच्छाइयाँ और कुछ बुराईयाँ होती हैं, किन्तु सभी धर्म के आदर्श अच्छे हैं, अतः धर्म ग्रन्थों के परस्पर विरोधी उपदेशों से जब हमारी बुद्धि ठिठक कर दिग्भ्रांत होने लगे तो हमें अपने विवके की शरण में जाना चाहिए। धर्म एक वैयक्तिक साधना है।

गाँधी जी सत्य को सबसे बड़ा धर्म और अहिंसा को परम कर्त्तव्य मानते थे। वे मूलतः मानवतावादी से तथा रूढ़ियों एवं अन्धविश्वासों के विरोधी थे। उन्होंने 'हिन्दू धर्म, को मनोवैज्ञानिक दृष्टि से सर्वश्रष्ठ धर्म बताया। उपनिशद् गीता एवं रामचरितमानस ने गाँधी जी को नैतिक बल प्रदान किया। वे हिन्दू धर्म की विराटता स्वीकार करते थे। इस धर्म ने समस्त मानवता को गौरव प्रदान किया हैं।

गाँधी जी की दृष्टि में धर्म कोई 'मतवाद' नहीं है। उनका धर्म सह–अस्तित्व का धर्म है, जिसका स्वभाव 'सर्वधर्मसम्भाव' है जिसकी प्रवृत्ति 'जियों और जीने दो' की है। वे इससे भी आगे 'दूसरों के लिए जियों' की परमार्थी प्रवृत्ति को अधिक महत्व देते हैं जो हिंसा, द्रोह, अज्ञान, छल छद्म और पाखण्ड की भावना से मुक्त हैं। इसके साथ ही सभी धर्मों के मूल में एक सर्वव्यापी सत्य की खोज करना उनका परम प्रयोजन है। गाँधी जी का धर्म किसी जाति या सम्प्रदाय का धर्म न होकर सम्पूर्ण मानव का धर्म है। यह धर्म कर्मकाण्ड का विषय न होकर आत्मबोध का विषय है।

जिस प्रकार विज्ञान अन्धविश्वास को प्रश्रय नहीं देता, उसी प्रकार गाँधी जी धर्म में व्याप्त रूढ़ियों एवं अनर्गल मान्यताओं के विराधी हैं। उन्हें किसी धार्मिक सम्प्रदाय से चिढ़ नहीं है। वे सभी धर्मों के विकास के समर्थक हैं। वे इस बात पर बल देते हैं कि जब तक रूढ़ियों एवं अन्धविश्वासों का षोधन नहीं होगा तब तक धर्म का सही रूप प्रकाशित नहीं होगा और न ही धर्म का लोकोपयोगी तत्व उजागर होगा।

गाँधी जी सभी धर्मों को एक मानते हैं, सभी धर्मों की आत्मा एक है, पर उनके रूप अनेक हैं। ये रूप अनंत काल तक रहेंगे। बुद्धिमान लोग बाहरी सतह की चिन्ता न करते हुए धर्मों के रूपों के भीतर एक ही आत्मा का निवास करता पायेंगे।[2]

गाँधी जी का धर्म से अभिप्राय किसी औपाचारिक और रूढ़िगत धर्म से नहीं है, वरन् विश्व के व्यवस्थित नैतिक अनुशासन से है। हिन्दू धर्म में आस्था रखते हुए भी उन्होंने इसकी आचरण सम्बन्धी रूढ़ियों, पाखण्डों या भ्रान्तियों का पक्ष नहीं लिया। उनकी दृष्टि में कोई धार्मिक क्रिया, आचार, संस्कार यदि व्यक्तिगत स्वार्थ सिद्धि या लोभ से किया जाये तो वह अनुचित है, पर यदि कोई क्रिया निश्काम भाव से की जाय तो वह बुद्धिसंगत न होने पर भी उचित है।

गाँधी जी ने मानवतावादी धर्म का पोशण किया जिसका चरम लक्ष्य सेवा है।[3] गाँधी धर्म के प्रमुख तत्व हैं– सत्य, प्रेम और अहिंसा, जो व्यक्ति वस्तुतः मानव कहलाना चाहता है उसमें दैहिक, मानसिक और सांस्कृतिक गुणों का विकास इन्हीं

अनुरूपी लेखक/संयुक्त लेखक

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-14, No.-IV, Issues-22, YEAR- Oct.-Dec.-2021

तत्वों पर आधारित होना चाहिए। महात्मा गाँधी का धर्म ऐसा था जिसमें ऊँच–नीच, जाति–भेद, रंग–भेद के लिए कोई स्थान न था। यद्यपि वे स्वयं को हिन्दू मानते थे, लेकिन उन्होंने अस्पृश्यता और जाति–व्यवस्था का किंचित मात्र भी समर्थन नहीं किया।

उन्होंने कहा कि भगवान ने इन्सान को ऊँच–नीच के साथ पैदा नहीं किया है। अस्पृश्यता में विश्वास भगवान का निशेध है। उन्होंने ऐसे मन्दिरों में प्रेवश तक से इंकार कर दिया जो अछूतों के लिए बन्द थे। महात्मा गाँधी के लिए धर्म और नैतिकता पर्यायवाची शब्द थे। उनकी दृष्टि में नैतिकता के आधारभूत सिद्धान्त सत्य और अहिंसा थे। उन्होंने इन दो सिद्धान्तों को 11 सिद्धान्तों के रूप में विकसित किया और इन सिद्धान्तों से पूर्ण एक गीत उनकी प्रातः और संध्या कालीन प्रार्थनाओं में गया जाता था।

सिद्धान्त– 1. अहिंसा, 2. सत्य, 3. अस्तेय, 4. ब्रह्मचर्य, 5. अपरिग्रह, 6. शरीरश्रम, 7. अस्वाद, 8. सर्वत्र भयवर्जन, 9. सर्व धर्म संमभाव, 10. स्वदेशी, 11. स्पर्श भावना इसमें प्रथम पाँच हिन्दू और जैन धर्म के आधारभूत नैतिक सिद्धान्त हैं तथा अन्य 6 इन्हीं सिद्धान्तों में से निकले हैं जो समय की आवश्यकताओं के अनुकूल ढाले जा सकते हैं।

महात्मा गाँधी का विचार था कि धर्म की आराधना के लिए हमें किसी गुफा में अथवा किसी पर्वत–शिखर पर जाने की आवश्यकता नहीं है। धर्म की अभिव्यक्ति तो समाज में हमारे कार्यों में होनी चाहिए। उन्होंने धर्म का मानवीकरण और समाजीकरण किया। पीड़ितों, असहायों और अभावग्रस्त लोगों की सेवा को उन्होंने सबसे बड़ा धर्म बताया। प्रार्थना की षक्ति में उन्हें अड़िग विश्वास था।

गाँधी जी की धार्मिक अवधारणा ने मृत्यु के भय को दूर करने का व्यावहारिक प्रयत्न किया। उन्होंने आत्मा की अमरता के सिद्धान्त को स्वीकार किया और यह माना कि जन्म–मरण ईश्वर की इच्छा से होते हैं। इन अटल नियमों को परिवर्तित करना मनुष्य की षक्ति में नहीं है। जब मृत्यु निश्चित है और निश्चित समय पर होनी है तो मृत्यु से भय नहीं करना चाहिये। गाँधी जी की दृष्टि में धर्म ह्रदय की करुणा से निकली हुई संजीवनी बूटी है और परिशुद्ध मस्तिष्क की खोज है।[4] धर्म, मानव की सुरक्षा और समृद्धि के लिए है। यदि कोई इसका दुरुपयोग करे तो इसमें धर्म का क्या दोष है ? जिस प्रकार फिटकरी जल की गन्दगी को साफ करती है, उसी प्रकार तर्क, रूढ़ियों एक अन्धविश्वासों को मिटाकर धर्म के वास्तविक रूप को उजागर करता है।

धर्म के अभाव में मानव जीवन का सर्वांगीण विकास कदापि सम्भव नहीं है। यह व्यवहार–परमार्थ या भौतिक–आध्यात्मिक अथवा लौकिक–अलौकिक में समन्वय करने का एकमात्र सूत्र है। भगवद्गीता का यही 'निष्काम कर्मयोग' है, जिसे गाँधी जी ने अपने जीवन का आदि और अन्त कहा है।

गाँधी जी के विचार से, "धर्म से मेरा आशय औपचारिक धर्म या प्रथागत धर्म से नहीं है बल्कि उस धर्म से है जो धर्मों का मूल है, और जो हमारे श्रेष्ठ से हमारा साक्षात कराता है।" धर्म के वैविध्य पर गाँधी जी का कथन है, "धर्म एक ही बिन्दु पर पहुँचने वाले भिन्न–भिन्न मार्ग हैं। यदि गंतव्य एक ही तो इससे क्या फर्क पड़ता है, यदि हम वहाँ तक पहुँचने के लिए अलग–अलग मार्ग पकड़े।" धर्म वस्तुतः अर्थ एवं काम का नियामक है और मोक्ष–प्रदाता है। धर्म–सम्मत अर्थ और धर्म–सम्मत काम ही निश्काम कर्म है, जो परम पद मोक्ष का द्वार खोलता है। गाँधी जी परम्परावादी नहीं थे। उन्होंने स्वयं कहा है– "सत्य के आग्रही को चाहिये की रूढ़ि से चिपककर कोई कार्य न करें। अपने विचार में दोष मानकर चले। दोष का ज्ञान होने पर संशोधन करे और प्रायश्चित भी।" वे अनुभव और मुक्ति के आधार पर ईश्वरवादी या धर्मनिष्ठ थे।

मानव प्रकृति के नियमों के अनुसार जन्म लेता है मृत्यु को प्राप्त होता है, वह केवल भौतिक शरीर ही नहीं है, वरन् उसमें चेतना, तर्क, विवेक, भावना, संकल्प आदि षक्तियाँ भी विद्यमान हैं, ये सभी आत्मा की अभिव्यक्तियाँ हैं। गाँधी जी के अनुसार–मानवीय आत्मा, ईश्वरी भावना का प्रतिबिम्बन है। मानव प्रवृत्ति में अच्छाइयाँ एवं बुराइयाँ दोनों सम्मिलित होती हैं। गाँधी जी ने लिखा है कि मैं ईश्वर को एक मानता हूँ और इसलिए मानवता की आधारभूत एकता में भी विश्वास करता हूँ। क्या हर्ज हैं कि हमारे शरीर अलग–अलग हैं किन्तु हमारी आत्मा तो एक है। यह ठीक उसी प्रकार है जिस प्रकार सूर्य की रश्मियाँ अपवर्तन के प्रभाव से विभिन्न रंगों की दिखायी पड़ती हैं, किन्तु वास्तव में उन सब का स्रोत एक ही है।

गाँधी जी ने नर–नारायण की कल्पना को सामने रखते हुए दुखी मानव की सेवा को ही ईश्वर की सर्वश्रेष्ठ पूजा तथा मोक्ष का साधन माना है। सत्य का आधार लेकर उन्होंने अपनी तमाम इच्छाओं और आकांक्षाओं, राग–द्वोष, बुद्धि और विश्वास, ज्ञान और कर्म को मानव की सेवा में निरन्तर लगाकर अपने आपकों शून्य में विलीन कर देने की महान् साधना की थी। पशु और मनुष्य के बीच अन्तर है। पशु स्वभाव से आत्म संयम नहीं जानता जबकि मनुष्य इसीलिए मनुष्य है कि वह आत्म संयम कर सकता है।

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-14, No.-IV, Issues-22, YEAR- Oct.-Dec.-2021

गाँधी जी के विचार से एक सामाजिक प्राणी होने के नाते मानव को समाज पर निर्भर रहना पड़ता है।[5] चूँकि मानव समाज की इकाई है, अतः समाज को भी मानव पर निर्भर रहना होता है। समाज की प्रगति के मूल में मानव के अन्तर्निहित सद्‌गुणों का विकास है। उनके विचार से, आदर्श समाज की रचना उन व्यक्तियों से मिल कर होती है, जो प्रेम और बन्धुत्त्व के सूत्र में बँधे होते हैं और परस्पर सहयोग से एक दूसरे के जीवन में भागीदार बनते हैं। ऐसे समाज में हिंसा और शोषण के लिए कोई स्थान नहीं होता है। चूँकि समाज का आधार परिवार है। अतः पारिवारिक सदस्यों की तरह समाज के सभी सदस्य एक दूसरे के हित–चिन्तन में सदैव निरत रहते हैं। परिवार का विकसित रूप ही समाज है, अतः समाज के हर व्यक्ति के जीवन का उद्‌देष्य हो जाता है कि बिना किसी प्रतिस्पर्द्धा या द्वेश के वह सभी लोगो को अधिकतम सुख उपलब्ध कराने का प्रयत्न करते रहे। इस प्रकार व्यक्ति और समाज में एक अन्तः सम्बन्ध और अन्तः निर्भरता होती है। प्रत्येक मानव षान्ति से जीवन जीना चाहता है। अतः उसका धर्म बनता है कि वह दूसरों को भी शान्ति से जीने दे। यदि सब में एक ही आत्मा है तो अपना हित सबका हित है और सबका हित अपना हित है, अर्थात व्यक्ति में समष्टि और समष्टि में व्यक्ति समाया हुआ है। अपने प्रति हिंसा कोई नहीं चाहता, अतः जो अपने प्रतिकूल है वह दूसरों के साथ नहीं करना चाहिए। मानव अपने जीवन में प्रेम और धैर्य की जितनी अधिक साधना करेगा उसी अनुपात में उसका और समाज का सर्वांगीण विकास होगा। मानव की योग्यता उसकी पशुता में न हो कर उसकी आध्यात्मिक शक्ति, नैतिक बल, सर्वभूतहित–साधना और सहृदयता में हैं।

गाँधी जी व्यक्तिवादी थे और व्यक्ति की स्वतन्त्रता को हर दृष्टि से अनिवार्य मानते थे।[6] किन्तु प्रत्येक व्यक्ति का आचरण कैसा हो, इस पर भी उन्होंने अपने विचार प्रकट किये हैं। उनके अनुसार व्यक्तिगत स्वतन्त्रता का यह अर्थ नहीं है कि हर व्यक्ति अपनी स्वार्थपूर्ण भावना की पूर्ति के लिए जैसा चाहे वैसा व्यवहार करें। प्रत्येक व्यक्ति के लिए स्वशासित होना अनिवार्य हैं। उन्होंने सदैव आत्मिक अनुशासन पर बल दिया।

गाँधी जी के धर्म सम्बन्ध विचार को आधुनिक परिवेश में प्रासंगिकता की बात की जाय तो उनके विचारो को अजाद भारत भूल गये, पश्चिम सभ्यता से भारत समोहित हुआ और अब उस बाढ़ में बह गया, पश्चिम की नीति– निरपेक्ष, राजनीति और अर्थनीति भारत ने स्वीकार कि भारत की जनता और सरकार इस रास्ते पर चल रही हैं। परिणामस्वरूप अजादी के इतने वर्षों के बाद भी गरीबी, बेरोजगारी, भ्रष्टचार, जातिभेद, सम्प्रदायिक दंगे इत्यादि समाप्त नहीं हुए, इतना ही नहीं उल्टे उनमे वृद्वि ही हुई हैं, स्वदेशी का मन्त्र मूलक सैकड़ों बहुराष्ट्रीय कम्पनियों और विदेशी कर्ज के जाल में भारत फँस गया हैं। गाँधी जी के स्वावलंबन के सिद्धांत को देश ने कभी का छोड़ दिया है, कश्मीर और उत्तर–पूर्व में देश से अलग होने के लिए हिंसक कार्यवाही चल रही हैं। देश में फॉसीवादी एवं संप्रदायिक शक्तियाँ फिर उभार पर हैं। देश में भिषण आर्थिक विषमता हैं। जो लगातार बढ़ रही हैं। यह गलत विकास नीति का परिणाम हैं।

देश की दूर्दशा क्यो हुई ? भारत अपने राष्ट्रपिता की सीख को भूल गया, यही इसका प्रमुख कारण हैं। आज रूस और पूर्वी यूरोप के राष्ट्र साम्यवाद को छोड़ रहे हैं। अमेरिका सरीखे पूँजीवादी राष्ट्रों में भी मण्डी हैं। बेरोजगारी हैं, हवा–पानी–मिट्टी का प्रदूषण, जंगलों का नाश आम्ल–वृष्टि आदि वहाँ हो रहे हैं। अणु–शक्ति के खतरे और अणु–बम से मानव का जीवन ही समाप्त हो जायेगा। ऐसा डर दुनिया भर में पैदा हुआ हैं। भोगवाद के कारण दो–चार पीढ़ियों के बाद भू–गर्भ में लोहा, कोयला, पेट्रोल आदि खनीज पदार्थ समाप्त हो जायेगें। फिर आगे आने वाली पीढ़ियां क्या करेगी ? भोग की अमर्यादित लालशा के कारण क्या हम ययाति–संस्कृति को चलाने वाले हैं ? गाँधी जी ने कहा था, "सबकी सारी आवश्यकताए पूर्ण करने इतने सामग्री धरती माता के पास हैं, लेकिन एक भी आदमी को लाभ पूरा करने के लिए सारी धरती अप्रर्याप्त रहेगी।" क्योंकि लोभ का अन्त नहीं हैं।

तो फिर हम किस रास्ते पर चल रहे हैं ? दुनिया में दो रास्ते हैं, एक हैं पश्चिमी, दूसरा हैं गॉधी का, आज भारत पहले रास्ते पर चल रहा हैं। अगर गॉधी मार्ग पर देश चलता तो कभी का सबको काम मिलकर गरीबी इतिहास में दाखित हो गई होती। गॉव व नगर तेजस्वी बनते शराब समाप्त होती। समाजिक समानता होकर दहेज भूतकाल का विषय बन जाता। शिक्षा में सार्थक परिवर्तन होता और युवको तथा राष्ट्र में आनंद छा जाता, लेकिन हमने गॉधी का रास्ता पसन्द नहीं किया आज भी दोनों मार्गों की तुलना कर हमें, खासकर एक तो चुनना चाहिए।

आज गॉधी विचार की ओर दुनिया भर के विचारकों का ध्यान गया हैं। दुनिया भर में इस दशा में प्रयोग हो रहे हैं, लेकिन दुर्भाग्य से हमारे देश में गॉधी विचार पर कभी गम्भीरता से विचार तक नहीं किया गया। हमने पश्चिम की अन्धी नकल की इसलिए स्वराज से गॉधी की कल्पना का सम्राज्य प्रकट होने के बजाय हराम राज्य का निर्माण हुआ हैं, क्योंकि आज कम से कम काम और अधिक से अधिक दाम यह अधिकांश लोगो का मन्त्र बन गया हैं। यह तो हराम हैं, मिट्टी दूषित हुई, पानी दुलर्भ हुआ, हवा खराब हुई, साथ ही राष्ट्र की एकात्मता और शांतिभंग हुई, इस स्थिति को बदलकर राष्ट्र भर में मनोमंथन

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-14, No.-IV, Issues-22, YEAR- Oct.-Dec.-2021

हो। इसलिए गॉधी विचार की प्रासंगिकता भारत में जाननी चाहिए। बेरोजगारी, गरीबी केन्द्रीयकरण, प्रदुषण, और हिंसा में देश के प्रमुख आर्थिक राजनैतिक, पर्यावरणीय और सामाजिक प्रश्न है, इन समस्याओं को लेकर पूरे राष्ट्र में विचार मंथन शुरू हो।

1. गाँधी–ग्रामोद्योग का स्वीकार और केन्द्रीय उत्पादनों का यथासंभव बहिष्कार,
2. ग्राम सभा को शहर में मोहल्ला सभा को गॉवनगर के कारोबार की सता का हस्तान्तरण, और
3. हिंसा का सर्वथा त्याग–सजीव खेती। इनके कार्यक्रमों का प्रसाद हो इससे राष्ट्र चिर निद्रा में से जागेगा और वैचारिक क्रांति का आरंभ होगा। ऐसी आशा हैं,

हमारे उत्थान के लिए गाँधी जैसे महामानव को भगवान ने भारत में यह उनकी महान कृपा हुई। गाँधी ने निःशस्त्र राष्ट्र को स्वतंत्र किया। असम्भव लगने वाला यह काम उन्होनें प्रत्यक्ष कर दिखाया। यह एक चमत्कार हुआ, हमने उन्हें राष्ट्रपिता की पदवी प्रदान की, उन्हीं के विचार भारत ने छोड़ दिये। यह कितनी कृतध्नता है। गोडसे ने गाँधी की शरीर की हत्या कि। यह अति निन्दनीय काम उसने किया लेकिन हमने उनके विचारधारा को यानी उनकी आत्मा को ही तिलांजली दे दी हैं।

इसलिए भारत आज महान संकट में फँस गया है। आम जनता की भौतिक प्राथमिक आवश्यकताएँ अबतक पूरी नहीं हुई। और पिछले दो हजार वर्षों में भारत का जितना नैतिक पतन नहीं हुआ होगा, उतना आज हुआ हैं। गाँप उजर गये हैं। और पराधीन हो गये हैं। महानगरों का जीवन नरक के समान हो गया है। इसलिए फिर से महात्मा गाँधी जी के शरण में जाकर उनके विचार के अनुसार अपना और राष्ट्र का निर्माण हम करें। इसी में हमारा कल्याण होगा। दुनिया भर के 53 नोबल पुरस्कार विजेताओं ने दुनिया को अवाह्न किया कि दुनिया के शोषण और विश्व–युद्ध को समाप्त करने के लिए दुनिया गाँधी मार्ग का अवलम्बन करे, क्योकि यही एक मात्रमार्ग है। काश हम इस अवाह्न को लेकिन गाँधी यानि ? गाँधी यानि नैतिकता, गाँधी यानि विकेन्द्रीकरण, गाँधी यानी साधन–शुचिता गाँधी यॉनि दरिद्रनरायण से एकरूपता, गाँधी यानि जन–सेवा, गाँधी यानि रचनात्मक कार्य, गाँधी यानि अन्याय के सामने घुटने न टेकते हुए अन्याय का, पशुबल से नही आत्मबल से यॉनि सत्याग्रह से संघर्ष करना, गाँधी यानि गलत व्यवस्था से असहयोग, गाँधी यानि स्वदेशी का आग्रह–पड़ोसी से बनी हुई चीजो का खरीदना और दूर की तत्वसम्बधी चीजों का यथासम्भव बहिष्कार। गाँधी यानि जो–जो जँचा उसका फौरन आचरण करना। राष्ट्रकवि दिनकर ने ठीक ही गाया हैं–

"गॉधी की लो शरण, बदल डालो मिलकर संसार,
या फिर रहो कल्की के हाथों से मिटने को तैयार,
पहूँच गई है, घड़ी फैसला अब करना ही होगा दो में,
किसी राह पर पगले पग धरना ही होगा"

जब तक आकाश में चाँद सूरज है, सितारे हैं, और पृथ्वी पर मानव हैं, तब तक महात्मा गॉधी अजर अमर रहेंगे। इस प्रकार उपर्युक्त धर्म सम्बंधी गॉधी जी के विचार एवं आधुनिचक परिवेश में उनकी प्रासंगिकता वर्तमान समय में धीरे–धीरे चरितार्थ हो रही हैं,

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. अग्रवाल, एम0के0 (1997)– शिक्षा के तात्विक सिद्धान्त, मेरठ, पब्लिसिंग हाऊस, पृ0सं0–3.
2. प्रो. ठाकुर दास बंग एवं रमेश चन्द्र ओझा (2000)– महात्मा गॉधी एवं कस्तुरबा गॉधी का संक्षिप्त जीवन परिचय, पृ0सं0–02.
3. लाल, आर0बी0 (2004)– शिक्षा के दार्शनिक और समाज शास्त्रीय सिद्धान्त, मेरठ, रस्तोगी पब्लिकेशन, पृ0सं0–10.
4. उपाध्याय, हरी भाऊ (2005)– बापू के आश्रम में, वाराणसी पिलग्रिमा पब्लिशिंग, पृ0सं0–4.
5. कपलानी कृश्ण (2005)– गाँधी एक जीवनी, नई दिल्ली, नेशनल ट्रस्ट इण्डिया, पृ0सं0–10.
6. गाँधी, एम0के0 (2005)– सत्याग्रह वाराणसी, पिलग्रिप्स पब्लिशिंग, पृ0सं0–12.

*****